International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 14-04-2026, Accepted: 15-05-2026, Published: 30-05-2026
Volume 8, Issue 2, 2026, Page No. 34-36

'घर का जोगी जोगड़ा': काशीनाथ सिंह की संस्मरणात्मक कृति का समीक्षात्मक अध्ययन

मनु डागुर[1], डॉ. पिंकी पारीक[2]
[1] शोधार्थी, हिन्दी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, वनस्थली विद्यापीठ विश्वविद्यालय, निवाई, टोंक, राजस्थान, भारत
[2] शोध निर्देशिका, असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, वनस्थली विद्यापीठ विश्वविद्यालय, निवाई, टोंक, राजस्थान, भारत

सारांश
हिन्दी गद्य साहित्य की संस्मरण विधा के सशक्त हस्ताक्षर काशीनाथ सिंह अपने यथार्थ लेखन एवं कथ्य व शिल्प में अपनी अलग पहचान रखते हैं। काशीनाथ सिंह के संस्मरणों में सृजनात्मक चेतना और सौन्दर्य बोध को जानने के लिए उनके व्यक्तित्व का दिगदर्शन अति आवश्यक है। प्रस्तुत शोध–पत्र उनकी संस्मरणात्मक कृति 'घर का जोगी जोगड़ा' के माध्यम से उनके ग्रामीण परिवेश, संघर्षशील जीवन व उनके प्रेरणास्त्रोत बड़े भाई 'नामवर सिंह' जो कि हिन्दी आलोचना जगत के मूर्धन्य विद्वान है, के व्यक्तित्व को यथार्थता के साथ हमारे सामने रखता है।

मूल शब्दः जीयनपुर, गरबीली–गरीबी, बनारस, नामवर सिंह, लोलार्क कुण्ड, भौजी, ग्राम्य संस्कृति, अस्सी चौराहा, पिताजी, काशी–हिन्दी विश्वविधालय

साठोतरी पीढ़ी के सशक्त कथाकार काशीनाथ सिंह का जन्म 1 जनवरी 1937 को उत्तर प्रदेश के बनारस जिले के जीयनपुर गाँव में साधारण किसान परिवार में हुआ। कथा साहित्य के द्वारा हिन्दी साहित्य में दस्तक रखने वाले काशीनाथ सिंह अपने कथ्य एवं अपने अनुभव व शिल्प में दूसरों से अलग है। उनके संस्मरणों में सामाजिक, बौद्धिक एवं नैतिक चेतना के दर्शन एक साथ होते हैं। जब काशीनाथ की सृजनात्मक चेतना संस्मरण लेखन की ओर अग्रसर हुई तो उन्होंने हाशिये पर रही संस्मरण विधा को अपने रचना कौशल के माध्यम से एक नया आयाम व एक नयी पहचान दिलाई। माधव हाड़ा के शब्दों में, ''हिन्दी संस्मरण विधा को नये रूप और चरित्र के साथ इधर काशीनाथ सिंह ने प्रस्तुत किया है। उनकी रचना 'याद हो कि न याद हो' और 'कासी का अस्सी' ने संस्मरण के स्वरूप व आस्वाद को काकी हद तक बदल दिया है।''[1]

काशीनाथ जी की पुस्तक 'घर का जोगी जोगड़ा' में तीन संस्मरण और एक परिशिष्ट–साक्षात्कार शामिल है। यह किताब जैसा कि लेखक के कथन से जाहिर है 'भैया के अस्सीवें बसन्त पर' नामवर सिंह पर केन्द्रित है। कथा साहित्य में संस्मरण साहित्य की ओर अग्रसर होने में काशीनाथ सिंह अपने बड़े भाई व रचनात्मक प्रेरणास्रोत 'नामवर सिंह' की भूमिका मानते हैं। वे कहते हैं, ''यह कहते हुए मुझे गर्व हो रहा है कि वे मेरे बड़े भाई ही नहीं, कथागुरू भी है। मुझमें जो भी थोड़ा कथा–विवेक है उन्हीं से अर्जित है। अगर में कहानी से संस्मरण की ओर गया और फिर संस्मरण से कथा रिपोर्ताज की ओर तो इसके पीछे कही न कहीं वे भी है। उनके सिवा और कौन समझ सकता है मेरे कथाकार की कमजोरियों और उसकी रचनात्मक ताकत को?'' आगे काशीनाथ जी कहते है ''मैं उन्हें अपने कानों में पढ़ता रहा हूँ पिछले पचास वर्षों से। वे जो कहते रहते हैं, उसे कभी लिखते हैं, कभी नहीं लिखते।''

इस फलक 'घर का जोगी जोगड़ा' का पहला संस्मरण है 'जीयनपुर'। यह बनारस जिले का वह गाँव जहाँ लेखक व उनके बड़े 'नामवर सिंह' का जन्म व बचपन बीता। जीयनपुर गाँव की भौगोलिक लघुता व परिवेश पर बात करते हुए काशीनाथ सिंह बताते हैं कि ''बचपन में जैसे ही इस गाँव से बाहर निकलने लायक होते थे, घर में पहला पाठ यही पढ़ाया जाता कि अगर कही भटक गये या गुम हो गये और कोई पूछे–कहाँ घर है? कहाँ रहते हो? क्या बोलोगे और उत्तर मिलता या रटाया जाता– आवाजपुर! जीयनपुर कहोगे तो कोई नहीं समझेगा।'' लेखक के अनुसार इसका कारण था, गाँव का बहुत छोटा होना तथा पड़ोसी गाँव 'आवाजपुर' का बड़ा होना! काशीनाथ के अनुसार तत्कालीन गाँव भले ही छोटे हो और शहरी परिवेश से भले ही दूर हो किन्तु आर्थिक रूप से गाँव मूलतः स्वयं पर ही निर्भर थे। मार्क्सवादी आलोचक डॉ. रामविलास शर्मा के शब्दों में ''जाँति–पाँति के बंधनों के बावजूद भारतीय गाँव एक आर्थिक इकाई के रूप में आत्मनिर्भर थे।''[4]

काशीनाथ जी अपने पिता 'नागर सिंह' जो कि जीयनपुर गाँव में प्राइमरी स्कूल के मास्टर थे, के बारे में कहते हैं– ''मास्टर तो दूसरे गाँव में भी थे, प्राइमरी ही नहीं, मिडिल स्कूल तक के लेकिन इनकी कुछ अपनी खासियत थी। ये कभी गाँव के पचड़ों–झगड़ों में पड़े नहीं। अपने काम से काम। न किसी की चुगली सुनना ओर न खाना! नाच–तमाशे और हा–हा–हू–हू से कोई मतलब नहीं। बच्चे चाहे जिस जाति के हो उन्हें डाट–डपट कर स्कूल भिजवाते थे। पाखंड–धूर्तता और झूठ से चिढ थी उन्हें! गृहस्थी का काम न हो करते थे और न कोई उनसे करने को कहता था।''[5]

काशीनाथ जी के उपर्युक्त प्रसंग से साफ जाहिर है कि उनके पिता एक स्वाभिमानी एवं खुद्दार व्यक्ति थे। जहाँ तक उनकी माताजी का प्रश्न है तो लेखक के अनुसार वे अपनढ़ थी किन्तु बच्चों की शिक्षा की प्रबल समर्थक। लेखक का व्यक्तिव निश्चय ही माता–पिता का उपहार ही है। काशीनाथ जी की सहजता पर एक साक्षात्कार में बनास पत्रिका के संपादक पल्लव ने उनकी सहजता व मुस्कराहट का राज पूछा तो जवाब मिला, "मुस्कराहट का राज है काशीनाथ जी की मूर्खता और बौडमपना, जिसे ज्ञानी भी नहीं भाँप पाते।''[6]

काशीनाथ जी के पिताजी की 'नामवर सिंह' को लेकर जो राय थी, उसके बारे में लेखक कहते हैं– ''अपने बड़े बेटे को लेकर पिता के सपने छोटे थे। उनके सपनों की ऊँचाई जीयनपुर के टीलों से अधिक न थी। इससे अधिक के बारे में सोच भी नहीं सकते थे। वे चाहते थे कि 'बडके जने' (नामवर सिंह) मिडिल पास करने के बाद नॉर्मल की ट्रेनिंग करे और गाँव के आस–पास किसी स्कूल में मास्टर हो जाऐ। खेती–बारी भी संभाले और पढ़ाएँ भी।''[7] किन्तु नामवर सिंह को यह स्वीकार न

हुआ और वे सन् 1941 में जीयनपुर छोड़ कर चले गए। उस समय काशीनाथ सिंह चार–पाँच वर्ष के थे। लेखक कहते है कि बड़े भाई के नाम पर में सिर्फ 'रामजी' को जानना था। जो कि लेखक के मँझले भाई थे।

'घर का जोगी जोगड़ा' पुस्तक का दूसरा संस्मरण है 'गरबीली गरीबी वह!' इस संस्मरण का केन्द्र शिखर पुरुष डॉ. नामवर सिंह जी है। प्रस्तुत संस्मरण में सन् 1957 से लेकर 1965 तक के जीवन क्रम को दर्शाया गया है। इस काल में नामवर सिंह के चुनाव लड़ने के कारण काशी हिन्दू विश्वविधालय से निष्कासित होने, बेरोजगारी के दौरान के संघर्ष, स्वाभिमानी एवं आत्मसम्मान पूर्ण व्यक्तित्व का चित्रण हुआ है। अनेक दुःखों, पराजयों, तिरस्कारों को जीते हुए जीवन–यापन करने वाले नामवर सिंह के जुझारू व कर्मठ व्यक्तित्व का चित्रण हुआ है। उनके इस व्यक्तित्व को लेकर काशीनाथ जी कहते है, ''मुझे याद नहीं कि विश्वविद्यालय से निष्कासन की सूचना उन्हें चुनाव लड़ने के दौरान ही मिली थी या बाद में। बहरहाल हार के बाद वे पार्टी ऑफिस से घर आये थे– थके–माँदे। मैंने आज तक ऐसे किसी आदमी की कल्पना नहीं की थी जिसके सारे दुखों, सारी परेशानियों, पराजयों और अपमानों का विकल्प अध्ययन हो। चुनाव हारने और अच्छी–खासी नौकरी जाने का सियापा घर में हो और वह आदमी खर्राटे ले रहा हो या कमरा बंद करके किसी लेख की तैयारी कर रहा हो या पढ़ी गयी किताब से 'नोट्स' ले रहा हो।''[8]

हिन्दी कहानियों के बारे में नामवर जी की तत्कालीन आलोचनात्मक समझ या विचारों पर बात करते हुए काशीनाथ जी कहते है कि 1 मई का दिन था, नामवर सिंह का जन्मदिवस। इसी दिन नामवर सिंह की नौकरी चली गई थी। वे उस पर अफसोस करने के बजाय काशीनाथ सिंह से ग्रामकथाओं व सन् 1940 के लेखकों पर बात कर रहे थे। नामवर सिंह कहते हैं, "दरअसल इन ग्राम कथाओं को स्वीकृति क्यों मिल गई, जानते हो? (वह चटाई पर घुटनों के बल बैठकर सुर्ती मल रहे थे।) 'जिन दिनों अमेरिका में विचारों वाली कहानियाँ लिखी जा रही थी और लोग किसी विचार को लेकर कोई फॉर्मूला तैयार कर रहे थे, उसी बीच शेरवुड ऐंडरसन ने 'वाइन्सबर्ग ओहायो' में एक छोटे से कस्बे के लोगों के जीवन्त स्केचेज दिये। लोगों को यह नई चीज दिखी लोग उधर ही झुक गए। वह नई कहानियों का बाप बन बैठा। इन ग्रामकथाकारों की सफलता का यही रहस्य है, बस। वास्तव में राजेन्द्र यादव और मोहन राकेश ने भी वही किया जो सन् 40 के बाद के कहानीकारों ने किया था किन्तु इनके विचार और फॉर्मूले कुछ दूसरे ढंग के है।''[9]

काशीनाथ जी आगे कहते हैं ''मैंने जिज्ञासा की– 'आप कभी कहानी या उपन्यास लिखने के बारे में नहीं सोचते? 'नहीं लिख सकता। लिखूँगा तो असफल हो जाऊँगा। मुझे तो ऐसा नहीं लगता। वातावरण शायद ले लूँगा, लेकिन डायलॉग नहीं बनेगा मुझसे।' 'जबकि मेरा खयाल इसके उल्टा है। आप डायलॉग ही अच्छा लिख सकते हैं।' यही तो, मेरे डायालॉग पात्र के डायलॉग होंगे ही नहीं, मेरे ही रह जायेगें। स्वभाविकता नहीं आयेगी। जैसा गोर्की में था। बड़े बनावटी लगते हैं, उनके संवाद।''[10]

काशीनाथ सिंह जी कहते हैं कि काशी विश्वविधालय से नौकरी से निकाल देने के बाद उनको सागर विश्वविद्यालय से नौकरी का बुलावा आया। उस समय नन्ददुलारे बाजपेयी जी सागर विश्वविद्यालय के अध्यक्ष थे। चूँकि नामवर सिंह जी के विचारों पर 'हजारी प्रसाद द्विवेदी' जो कि उनके गुरू रहें हैं के व्यक्तित्व का प्रभाव था। जो कि बाजपेयी को पसन्द नहीं आया और अन्ततः वहाँ से भी नामवर जी को निकाल दिया गया।

'घर का जोगी जोगड़ा' का तीसरा एवं अन्तिम् संस्मरण है 'घर का जोगी जोगड़ा।' इस संस्मरण के माध्यम से व्यक्ति नामवर जी व आलोचक नामवर जी दोनों को नजदीक से जानने का अवसर मिलता है। इस संस्करण में काशीनाथ जी अपनी भौजी, नामवर सिंह की पत्नी के माध्यम से तत्कालीन समाज में नारी की स्थिति पर प्रकाश डालते हैं। वे कहते हैं, ''लोलार्क कुण्ड हो या दिल्ली –जिसने भी देखा, उनकी पीठ ही देखी होगी, चेहरा नहीं। वे भारत की उन नारियों में से रही हैं, जो कभी नहीं जान पातीं कि पैदा होने और मरने के बीच जीवन भी होता है।''[11]

व्यक्ति के रूप में नामवर सिंह के वैवाहिक जीवन के बारे में काशीनाथ जी कहते हैं कि 45 में उनकी शादी हुई और 48 में विजय पैदा हुआ। वे कहते हैं, ''मुझे नहीं याद कि भैया ने कभी भौजी को दिन के उजाले में देखा हो, भौजी ने भी उन्हें देखा होगा तो घूँघट से ही। साल में एक दो बार ही सही बनारस से घर आते थे। वे इतने बेहया भी नहीं थे गाँव की नजरों में कि औरत आ गई तो जब–तब दौड़ा करें। भौजी दिन भर पूरा नहीं, तो आधा घूँघट में ही रहती हमेशा। यहाँ तक कि औरतों के साथ नित्यकर्म के लिए राह और भिनुसार बाहर निकलती तो भी घूँघट में ही।''[12]

जीयनपुर से बनारस में जब नामवर सिंह और काशीनाथ जी साथ में किराये पर कमरा लेकर रहने लगे तो किस प्रकार एक छोटे से कमरे में तमाम सुख–सुविधाओं से रहित अभावपूर्ण जीवन दोनों ने जिया। इस पर काशीनाथ जी कहते हैं, ''इसी कमरे में नामवर सिंह 53 से 59 तक रहे। जुलाई से जुलाई तक। यह कमरा नामवर के अध्यापक, समीक्षक और साहित्यिक–सांस्कृतिक कार्यकता का 'लेबर रूप' था। इसी कमरे में मेरा परिचय अपने बड़े भाई से भी हुआ और नामवर से भी। इसी कमरे में उन्होंने छात्रों के लिए वे 'क्लासनोट्स' तैयार किए जो 'आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ' के नाम से हुऐ। इसी कमरे के अठारह दिनों के अन्दर 'पृथ्वीराज रासो की भाषा' लिखी। 'कहानी : नयी कहानी' और 'इतिहास और आलोचना' से ज्यादातर लेख रात भर जागकर इसी कमरे में लिखे गये थे। जाने यह कमरा कैसे एक बार दिल्ली पहुँच गया। दिल्ली और दस–बारह दिनो में 'दूसरी परम्परा की खोज' करके गुम हो गया।''[13]

काशीनाथ जी के उपर्युक्त विवेचन के सहज ही पाठक 'नामवर सिंह' के कर्मठ और रचनात्मक व्यक्तित्व से सम्मोहित हो सकता है। उनकी सृजनशीलता को देखकर ऐसा लगता है मानो जन्म के साथ ही वो सृजनशीलता लेकर पैदा हुए। काशीनाथ जी बताते है जीवन के अन्तिम समय में नामवर सिंह बीमार थे। तब भी उनका ये लेखकीय व्यक्तित्व उनके भीतर मौजूद था। नामवर सिंह कई दिन से बुखार से पीडित थे, जब लेखक उनके पास बैठा तो वो कहने लगे, ''देखो, मैं जीने के लिए नहीं जीना चाहता। आया था उत्साह से 'नवजागरण' पर किताब लिखने के लिए न लिख पा रहा हूँ, न पढ़ पा रहा हूँ। ऐसे जीने से क्या लाभ? आखिर डॉक्टर बताते क्यों नहीं कि इतने दिनों से बुखार क्यों है?''[14] इस प्रकार हम पाते हैं कि काशीनाथ जी ने अपने इस संस्मरण के माध्यम से 'नामवर सिंह' के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर, प्रेरणा पाकर, काशीनाथ जी की रचनाशीलता ने नये आयाम को छू लिया। काशीनाथ जी की सहजता व व्यक्तित्व पर हम हिन्दी साहित्य की प्रसिद्ध लेखिका 'ममता कालिया' के वक्तव्य से जान सकते हैं कि वो यही है कि वो कितने सहज व्यक्ति थे। ममता कालिया कहती हैं, "काशी जी की सबसे बड़ी खूबी यही है कि वे अपनी विद्वत्ता का आतंक नहीं फैलाते। आप उनसे साहित्य से लेकर स्मिता पाटील पर बात कर सकते हैं। वह हर विषय पर सहज संवाद स्थापित कर सकते हैं। बात को घुमा–फिराकर अपना सिक्का जमाने का कोई प्रयास नहीं।''[15]

निष्कर्ष

काशीनाथ सिंह के संस्मरण साहित्य में एक बात जो सबसे पहले उभर कर आती है, वह है जिन्दगी के प्रति उनका गहन अनुराग और यह अनुराग कही–कहीं लबालब होकर छलक भी पड़ा है।

कुल मिलाकर संस्मरण साहित्य को काशीनाथ सिंह ने समृद्ध करने का सार्थक प्रयास किया। अपनी पुस्तक 'घर का जोगी जोगड़ा' में प्रख्यात आलोचक 'नामवर सिंह' का मार्मिकता व यथार्थ के स्तर पर जो शब्दचित्र पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया, वह अन्यत्र दुर्लभर है।

सन्दर्भ

1. माधव हाडाः ''हिन्दी में कथेत्तर गद्य'' बहुवचन (पत्रिका), सं. अशोक मिश्र, जनवरी–मार्च, 2013, पृ.सं.–142
2. काशीनाथ सिंह, ''घर का जोगी जोगड़ा'', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2006, पृ.सं.–9
3. काशीनाथ सिंह, ''घर का जोगी जोगड़ा'', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2006, पृ.सं.–15
4. डॉ. रामविलास शर्मा, ''परम्परा का मूल्यांकन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं.–76
5. काशीनाथ सिंह, ''घर का जोगी जोगड़ा'', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2006, पृ.सं.–19
6. पल्लव सं. (बनारस पत्रिका), अंक–2, वर्ष–2009, पृ.सं.–3
7. काशीनाथ सिंह, ''घर का जोगी जोगड़ा'', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2006, पृ.सं.–21
8. काशीनाथ सिंह, ''घर का जोगी जोगड़ा'', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2006, पृ.सं.–28
9. काशीनाथ सिंह, ''घर का जोगी जोगड़ा'', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2006, पृ.सं.–32
10. काशीनाथ सिंह, ''घर का जोगी जोगड़ा'', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2006, पृ.सं.–33
11. काशीनाथ सिंह, ''घर का जोगी जोगड़ा'', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2006, पृ.सं.–71
12. काशीनाथ सिंह, ''घर का जोगी जोगड़ा'', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2006, पृ.सं.–73
13. काशीनाथ सिंह, ''घर का जोगी जोगड़ा'', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2006, पृ.सं.–80
14. काशीनाथ सिंह, ''घर का जोगी जोगड़ा'', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2006, पृ.सं.–123
15. ममता कालिया, ''काशीनाथ सिंह : एक पारिवारिक मित्र', कासी पर कहन, वर्ष अगस्त, 2000, सं. मनीष दुबे, पृ.सं. –129–130